जीवन-चरित

राजस्थान के गौरव

- संकलित

पाठ-परिचय

प्रस्तुत अध्याय में राजस्थान के महान् जीवन-चरितों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है, जिन्होंने अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व से समाज को नई दिशा दी। देवनारायण जी, बाबा रामदेव, संत जम्भेश्वर, पूज्य गोविन्द गुरु, महाराजा सूरजमल के जीवन-चरित सदा से प्रेरणा-स्रोत रहे हैं, इन्हें जन-मानस में अपार श्रद्धा प्राप्त है। सामाजिक समरसता की स्थापना, राष्ट्रीय स्वाधीनता, पर्यावरण संरक्षण एवं सामाजिक सुधार के क्षेत्र में इन्होंने अपना जीवन समर्पित किया। अतः इनके द्वारा दिए गए संदेश हमारे लिए अनुकरणीय हैं।

****

राजस्थान रणबाँकुरों की धरती है। एक से बढ़कर एक साहसी और तेजस्वी योद्धाओं ने इस धरती पर जन्म लिया है। रणभूमि में जिनके रौद्र रूप को देखकर शत्रुओं में भय व्याप्त हो जाता था, ऐसे एक-दो नहीं अनेक पराक्रमियों को इस वीर-प्रसूता भूमि ने अपनी गोद में पाला है। तभी तो इस भूमि के लिए कहा जाता है :–

केसरी नहं नीपजे अठै, नहं हीरा निपजंत।
सिर कटिया खग सांभणा, इण धरती उपजंत।।

इस धरती पर न तो केसर पैदा होती है, और न हीरों की खानें हैं। यहाँ तो ऐसे वीर जन्मते हैं, जो सिर कट जाने पर भी लड़ते हैं। इस धरती ने जुँझारों के समान ही त्यागी-तपस्वी और भक्त भी उत्पन्न किए हैं। हमारे देश में उच्च स्तर के योगी और रणभूमि में वीरगति पाने वाले योद्धा दोनों को ही मोक्ष का अधिकारी माना गया है। यही कारण है कि इस वीर प्रसूता भूमि ने ऐसे श्रेष्ठ पुरुषों को जन्म दिया जो शस्त्र व शास्त्र दोनों में निष्णात थे। एक ओर तलवार के धनी थे तो दूसरी ओर पहुँचे हुए सिद्ध भी थे। अपनी सिद्धियों और शूरता का उपयोग जिन्होंने अन्याय का प्रतिकार करने, लोक जागरण में तथा समाज में समता निर्माण करने में किया। परिणामस्वरूप शताब्दियों के बाद आज भी लोग उनके नाम का स्मरण करते हैं, उनकी समाधियों पर मेले लगते हैं और उन मेलों में दूर-दूर से जातरू पैदल चलकर भी लाखों की संख्या में वहाँ पहुँचते हैं तथा अपने कष्टों को दूर करने की मनौती माँगते हैं।

ऐसे सभी जातरूओं की सेवा में भण्डारों का आयोजन कर सामान्यजन भी पलक पाँवड़े बिछाये तैयार रहता है, उनके थके-माँदे, लहू-लुहान पैरों को गर्म पानी से धोना, उनकी मालिश करना, उनके लिए गरमा-गरम चाय-अल्पाहार व भोजन की निःशुल्क व्यवस्था करने में बड़े धनिक और सामान्यजन अपने को धन्य मानते हैं। समाज बांधवों के कष्टों को दूर करने में अपना सौभाग्य समझना, यह हमारा अहोभाग्य है कि ये हमें सेवा का अवसर दे रहे हैं, ऐसी श्रेष्ठ मानसिकता से सेवा कार्य में रत सेवारू को जब लगता है कि ये हमें सेवा का अवसर दिये बिना ही आगे बढना चाहते हैं तो उनको रोकने का आग्रह देखते ही बनता है, कोई

हाथ जोड़कर विनती कर रहा है, कोई सड़क पर लेटकर यह कहते भी सुनाई देता है कि आप को जाना है तो हमें रौंदकर ही जा सकते हैं, अन्यथा हमें सेवा का लाभ तो देना ही पड़ेगा। ऐसे अविस्मरणीय दृश्य हर वर्ष इन दूर-दूर से पैदल चल कर आने वाले जातरूओं को उनके मार्ग में स्थान-स्थान पर दिखाई देते हैं। यह सब उन श्रेष्ठ पुरुषों के त्याग व तपस्या का ही फल है, जो आज भी दृष्टिगोचर हो रहा है। हम ऐसे ही नरपुंगवों के कर्तृत्व से अपना जीवन प्रकाशमय बनाए, समाज में समरसता का संचार करें और लोक सेवा में लगकर अपना जीवन धन्य कर लें।

देवनारायण जी

देवनारायण जी बगड़ावत कुल के थे और बगड़ावत नागवंशीय गुर्जर थे। इसलिए सारा गुर्जर समाज देवनारायण जी को श्री विष्णु का अवतार मानता है। आपने राज्य क्रान्ति कर अपने समय के अत्याचारी शासन का अन्त किया था। आपके जन्म-समय के सम्बन्ध में काफी मतभेद है, फिर भी लोक मान्यताओं, प्रमाणों तथा तत्कालीन राज्य वंशों से सामंजस्य बिठाने पर आपका जन्म युगाब्द 4142 (वि.सं. 1097) की माघ शुक्ल सप्तमी (भानु सप्तमी) को हुआ माना जाता है। चौहान राज ने बगड़ावतों को 'गोठा' की जागीर दी थी, यह जागीर वर्तमान भीलवाड़ा जिले के आसीन्द से अजमेर जिले के मसूदा तक का खारी नदी के आस–पास का क्षेत्र माना जाता है।

राणा दुर्जनसाल के अत्याचारों से बालक देवनारायण को बचाने हेतु माता सोढ़ी खटानी इन्हें अपने पीहर देवास ले आई। अब देवास में ही इनका लालन-पालन होने लगा। बचपन में ही घुड़सवारी और शस्त्र संचालन सीखा और साथ ही साथ शिप्रा के किनारे (उज्जैन) सिद्ध-वट में वह साधना भी करने लगा। सिद्ध वट के योग्य गुरुओं ने उन्हें आयुर्वेद के साथ तंत्र-विद्या भी सिखायी। देखते ही देखते देवनारायण एक कुशल योद्धा के साथ-साथ आयुर्वेद और तंत्र शास्त्र के भी पण्डित हो गए। अब उन्हें अन्याय और अत्याचार को समाप्त कर धर्म की स्थापना का अपना जीवन लक्ष्य समझ में आ गया था।

बगड़ावतों का अनन्य मित्र छोटू भाट इसी दिन की प्रतीक्षा कर रहा था, वह इन्हें 'गोठा' ले चलने हेतु देवास आ गया। छोटूभाट, माता सोढ़ी तथा कुछ अंगरक्षकों के साथ ये देवास से चल पड़े। धार में स्थित महाकाली की आराधना के समय राजा जयसिंह की बीमार पुत्री पीपलदे को अपने आयुर्वेद के ज्ञान से भला-चंगा कर दिया, वहीं पीपलदे से उनका विवाह हो गया। अपने आयुर्वेद ज्ञान तथा सिद्धियों से लोगों के कष्टों को दूर करने लगे, जिससे उनका यश चारों ओर फैलने लगा। अब देवनारायण लोगों के कष्ट हरने वाले साक्षात् भगवान् ही बन गए। नीनलदे की कुरूपता दूर करना, सारंग सेठ को पुनर्जीवित करना, सूखी नदी में पानी निकालना आदि इनके चमत्कार माने जाते हैं।

इनके गोठा पहुँचते ही सभी इनसे आ मिले। गोठा में अमन-चैन कायम कर जनता को ढाढ़स बँधाया, किन्तु उनके पूरे राज्य और पड़ौस के राज्य में राणा के अत्याचार उसी तरह चल रहे थे। उनके कुशासन को समाप्त करने के लिए दुर्जनसाल के साथियों को एक-एक कर परास्त किया और राज्य क्रान्ति कर सुशासन स्थापित किया। दूसरी इनकी महत्त्वपूर्ण देन यह भी है कि इन्होंने औषधि के रूप में गोबर और नीम का महत्त्व स्पष्ट किया, तुलसी की भाँति नीम व गोबर को प्रतिदिन के व्यवहार में लाने का सफल प्रयास आपने किया। इसी कारण आज भी इनकी पूजा नीम की पत्तियों से होती है।

बाबा रामदेव

राजस्थान के पश्चिमी क्षेत्र का एक नगर पोकरण जो आज परमाणु विस्फोट स्थल के रूप में संसार के मानचित्र पर उभरा है, इसी नगर के समीप आज से लगभग 653 वर्ष पूर्व विक्रमी संवत् 1409 में भाद्रपद शुक्ल द्वितीया को रूणीचा के तँवरवंशीय ठाकुर अजमल जी व माता मैणादे के घर रामदेव अवतरित हुए। शैशवावस्था में ही मारवाड़ी कहावत- 'पूत रा पग पाळणे दीखे' को चरितार्थ करते हुए उफनते दूध को नीचे रख माँ मैणादे को चमत्कार दिखाया। कुछ बड़े होते ही गुरु बालकनाथ से शिक्षा लेना प्रारम्भ किया। इतिहास, धर्म, दर्शन के साथ-साथ अस्त्र-शस्त्रों की शिक्षा प्राप्त की। किशोरावस्था में ही पोकरण के पास के कस्बे 'साथलमेर' में भैरव तांत्रिक को मार कर सम्पूर्ण क्षेत्र को उसके आतंक से मुक्त करवाया।

अब रामदेव ने परिस्थिति को पहचान कर लोक कल्याण में ही अपना जीवन खपाने का संकल्प लिया। राजपूत जाति के होने पर भी उन्होंने दलितों से सम्पर्क बढ़ाया तथा 'जम्मा-जागरण' आन्दोलन के माध्यम से उन्हें जाग्रत कर अच्छाइयों की ओर प्रवृत्त किया। जम्मा-जागरण का यह पुनीत कार्य मेघवाल जाति के द्वारा ही किया जाता था, शेष समाज उनकी वाणी का श्रवण किया करता था। समाज के पिछड़े बन्धुओं के प्रति रामदेव जी का अन्तःकरण करुणा व परोपकार से ओत-प्रोत था। उन्होंने मेघवाल जाति की कन्या डाली बाई को अपनी धर्मबहन बनाया तथा पिछड़ी बस्ती में हैजा फैल जाने पर अपनी पत्नी को अकेली छोड़कर उनकी सेवा-चिकित्सा हेतु दौड़ पड़े।

रामदेव जी स्वयं सिद्ध योगी व वैद्यकीय चिकित्सा में पारंगत थे, इस कारण विकलांगता जैसी बीमारियों में उन्होंने लोगों की चामत्कारिक सहायता की। कुष्ठ रोग, हैजा आदि में उनकी चिकित्सा रामबाण थी, इसी कारण वे पीड़ितों को रोगमुक्त कर चमत्कार दिखा सके। उनके चमत्कार 'परचों' के रूप में विख्यात हैं। लखी बनजारे की मिश्री को नमक बनाना, पाँच पीरों के कटोरे मक्का से पल भर में लाकर उनके सामने रखना, नेतलदे की पंगुता को दूर करना, सारथिये को तथा अपनी बहन सुगना के पुत्र को जीवित करना उनके प्रमुख परचे हैं।

मेरे जीवन का उद्देश्य पूरा हो गया है, ऐसा मान उन्होंने अपनी लीला मात्र 33 वर्ष की आयु में ही समेट ली। भादवा सुदी दशमी वि.सं. 1442 के दिन उन्होंने समाधि ले ली। आज उसी समाधि पर प्रतिवर्ष एक विशाल मेला लगता है, जिसमें प्रतिदिन लाखों जातरू दर्शनार्थ आते हैं, और उनके गीत गाते हैं-

''घणी घणी खम्मा हो, अजमाल जी रे लाल ने।''

सन्त जम्भेश्वर

प्रकृति-प्रदत्त समाज-जीवन हमारे देश की मूल आत्मा है। इसी आत्मा के तत्त्वान्वेषी और सशक्त उद्घोषक थे- सन्त जम्भेश्वर जी। श्री कृष्ण जन्माष्टमी को जन्मे सन्त जम्भेश्वर-जाम्भोजी के नाम से भी भक्तों में प्रसिद्ध हैं। इनका जन्म नागौर जिले के पीपासर गाँव में हुआ था। बाल्यकाल से ही वे चिन्तनशील प्रवृत्ति के थे। 34 वर्ष की आयु में माता-पिता का देहान्त हो जाने के पश्चात् आपने सारी सम्पत्ति दान कर दी और सामाजिक उत्थान में लग गये। उन्हें लोग जाम्भोजी कहा करते थे।

आप बीकानेर जिले की नोखा तहसील के 'समराथल धोरा' आए और अपना 'मुकाम' बनाया। इसी स्थान पर उन्हें दिव्य-ज्ञान भी प्राप्त हुआ तथा ईस्वी 1485 की कार्तिक अष्टमी को उन्होंने प्रथम उपदेश दिया। समाज में धर्म स्थापना व प्रकृति से सहजीवन के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए उन्होंने जीवन हेतु

29 नियम बनाये, इन्हें मानने वाले बिश्नोई (बीस़नौ अर्थात् बिश्नोई) कहलाये। ये सभी नियम सदाचार, जीवन की नियमितता तथा प्रकृति संरक्षण पर ही आधारित हैं। आपने कट्टरता पर भी निरन्तर प्रहार किये, दुष्टों का निग्रह अपने चमत्कारी व्यक्तित्व से किया। आपने सुल्तान सिकन्दर लोदी को भी गो-हत्या न करने के लिए राजी कर लिया था।

समाज को सन्त जम्भेश्वर जी के नेतृत्व से एक नई संजीवनी मिली। कई विधर्मी भी उनसे प्रभावित होकर उनके शिष्य बने। सरल व सुखी जीवन के इन नियमों के कारण लोग बड़ी संख्या में उनके अनुयायी बने। अपने विराट् व्यक्तित्व के कारण वे सहज ही लोकमन के देव बन गये। बीकानेर जिले के लालसर गाँव में समाधि लेकर उन्होंने अपनी जीवनलीला पूर्ण की।

जम्भेश्वर जी तो चले गये; किन्तु उनके अनुयायियों ने उनके बताये मार्ग का अनुसरण अपना बलिदान देकर किया। प्रकृति की रक्षा हेतु दिया गया वह बलिदान अत्यन्त प्रेरक एवं अद्वितीय है। जोधपुर जिले का एक गाँव खेजड़ली आज भी इस बलिदान का साक्षी है। बात सन् 1730 की है। जोधपुर महाराजा ने अपने सैनिकों को राज्यकार्य हेतु वृक्ष काट कर लाने को कहा। सैनिकों ने 'खेजड़ली' गाँव को उपयुक्त समझा, क्योंकि इस गाँव के प्रत्येक खेत में बहुतायत में खेजड़ी (शमी) के वृक्ष थे। राजा के सैनिक इस गाँव में आ धमके। गाँव की ही एक माता इमरता देवी को जब इसका पता लगा तो वे दौड़ कर खेत में पहुँची और खेजड़ी न काटने हेतु समझाने लगी। इतने में गाँव के लोगों को भी पता लगा और वे भी वहाँ आ गये। राजा के सैनिक तो सत्ता मद में चूर थे ही मना करने पर भी पेड़ काटने लगे तो इमरता देवी ने उन्हें ललकारते हुए कहा कि हमारे जीते जी तुम ये वृक्ष नहीं काट सकते और गाँव के लोगों को प्रेरणा देते हुए कहा- ''सर साँटे रूँख रहे तो भी सस्तो जाण'' सभी स्त्री-पुरुष एक-एक पेड़ के आगे खड़े हो गये। परम वीरांगना इमरता देवी उनकी तीनों पुत्रियाँ असी, रतनी व भागू बाई तथा पति रामोजी ने अपना बलिदान दिया। फिर तो गाँव वाले भी पीछे नहीं रहे, एक के बाद एक वृक्ष की रक्षार्थ कटते गये। इस प्रकार उस दिन लगभग 363 लोगों का बलिदान उस खेजड़ली ग्राम में हुआ। वे सभी बलिदान करने वाले जम्भेश्वर जी के ही अनुयायी थे। आज भी उनकी स्मृति में प्रतिवर्ष मेला भरता है। हजारों लोग आते हैं, उन्हें अपना श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं तथा प्रकृति व पर्यावरण संरक्षण का संकल्प लेते हैं। यही कारण है कि बिश्नोइयों के गाँव में वृक्ष आज भी नहीं काटे जाते, हिरण नहीं मारे जाते।

पूज्य गोविन्द गुरु

राजस्थान के धुर दक्षिण में, गुजरात और मध्यप्रदेश की सीमाएँ जहाँ स्पर्श करती हैं, वहाँ एक दिव्य बलिदान का साक्षी बनकर खड़ा है- ''मानगढ़ का विशाल पहाड़''। लगभग एक शताब्दी पूर्व इस सघन वनांचल में वनवासी बन्धुओं ने एक व्यापक स्वाधीनता आन्दोलन का संचालन किया था। यह अभियान इतना प्रभावी था कि अंग्रेज सरकार घबरा उठी। परिणामस्वरूप इसे कुचलने के लिए 17 नवम्बर, 1913 ई. को आयोजित राष्ट्रभक्तों के विराट् सम्मेलन में अंग्रेजों ने लाखों वन-बन्धुओं पर अंधाधुन्ध गोलीबारी करके 1500 वनवासियों को मौत के घाट उतार दिया। जलियाँवाला बाग हत्याकांड से भी भीषण और उससे भी पहले हुआ यह बलिदान आज भी वनवासियों के गीतों व कथाओं में रचा बसा है। मानगढ़ के इस पहाड़ पर आज भी चढ़ते हैं तो रोमांच हो जाता है। ऐसे विराट् स्वाधीनता आन्दोलन का नेतृत्व करने वाले महापुरुष थे -

पूज्य गोविन्द गुरु।

डूँगरपुर जिले के 'बासियाँ' गाँव में 20 दिसम्बर, 1858 ई. को एक बनजारा परिवार में जन्में गोविन्द को बचपन में संस्कार मिले गाँव के शिव मन्दिर के पुजारी से। परिवार की घुमन्तू जीवनशैली ने दुनिया देखने का अवसर दिया और निर्णायक मोड़ आया, 1880 में स्वामी दयानन्द सरस्वती के साथ तीन महीने तक उदयपुर में रहने से। लाखों वनवासी बन्धु अशिक्षा, बेकारी, भूख, अकाल, बीमारियों, व्यसनों तथा अन्धविश्वासों के साथ-साथ सामंती और अंग्रेजी सरकार के अत्याचारों को सह रहे थे। ऐसे पीड़ित समाज को सुधारने का बीड़ा उठाया गोविन्द ने। 'सम्पसभा' नामक सामाजिक संगठन की स्थापना के साथ ही प्रारम्भ हुआ गाँव में हवन कुंडों (धूणी) की स्थापना का कार्य। गोविन्द ने स्वच्छता, भजन-सत्संग, बच्चों की शिक्षा, मेहनत करना, चोरी न करना, मद्य-माँस सेवन नहीं करना, आपसी विवाद नहीं करना, बेगार नहीं करना और इसी के साथ विदेशी का बहिष्कार तथा स्वधर्म में दृढ़ रहने आदि के भाव स्थापित किए। समाज सुधार की बात गाँव-गाँव में चली तो गोविन्द हो गया अब 'गोविन्द गुरु'। लाखों अनुयायी बनने लगे, कण्ठी (रुद्राक्ष) धारण करने लगे और समवेत स्वर में लाखों कण्ठों से गुँजायमान होने लगा, यह गीत–भूरोटिया! नी मानू रे नी मानू..... (अंग्रेज! मैं तुम्हें कभी स्वीकार नहीं करूँगा।)

सन् 1903 से प्रतिवर्ष 'मार्गशीर्ष पूर्णिमा पर' सम्प सभा का वार्षिक सम्मेलन मानगढ़ के विशाल पहाड़ पर होने लगा, इसमें लाखों लोग जुटते थे। स्थानीय सामन्त-जागीरदार तो पहले से ही नाराज थे, ऊपर से उनके शत्रुओं ने भी कान भरने शुरू किए जिसका परिणाम हुआ सन् 1913 का मानगढ़ हत्याकांड। कर्नल 'शटल' के एक आदेश से भक्तों पर गोलियाँ बरसाई जाने लगीं, लगभग आधा घंटा यह वीभत्स तांडव चलता रहा और जब तक बन्दूकें थमीं तब तक भारत माता के 1500 से अधिक पुत्र-पुत्रियाँ अपने प्राणों की आहुतियाँ दे चुके थे। गुरु के पाँव में भी गोली लगी थी। उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया था।

गोविन्द गुरु को अदालत ने फाँसी की सजा सुनाई, बाद में उसे काला पानी में और फिर आजीवन कारावास में बदल दिया। अहमदाबाद की सेण्ट्रल जेल में उन्हें रखा गया। विश्वयुद्ध में अंग्रेजों की विजय के फलस्वरूप श्रेष्ठ आचरण के आधार पर इन्हें भी सशर्त मुक्त किया गया। गुरु अब 60 वर्ष के हो चले थे। गुजरात में पंचमहाल में कम्बोई नामक स्थान पर जीवन का अन्तिम समय बीता। 30 अक्टूबर, 1931 ई. को यहीं से उन्होंने स्वर्ग प्रस्थान किया। आज भी हर मार्गशीर्ष पूर्णिमा पर हजारों लोग उस पहाड़ पर आते हैं, धूणी में नारियल अर्पित करते हैं और वहाँ की माटी को मस्तक से लगाते हैं।

महाराजा सूरजमल

हमारे देश से यवनों की सत्ता को सर्वदा के लिए समाप्त करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले प्रतापी महाराजा सूरजमल का जन्म राव राजा बदनसिंह के पुत्र के रूप में श्री रानी देवकी की कोख से 13 फरवरी, सन् 1707 ई. (माघ शुक्ल पक्ष दशमी संवत् 1763 विक्रमी) में अपने ननिहाल कामर में हुआ था। जन्म से ही सूरजमल की तेजस्विता से सभी प्रभावित थे। युवावस्था तक आते आते वे सुदृढ़ शरीर के साहसी योद्धा हो गए। इसी के साथ कूटनीति के खेल में भी वे निष्णात हो गए। राजा बदनसिंह के पुत्रों में वे सबसे बड़े पुत्र थे, गुणों में भी श्रेष्ठ थे, अतः युवराज उन्हें ही बनाया गया।

सन् 1731 में इन्होंने मेवात के दावर जंग को धूल चटा दी। नवम्बर 1745 में उन्होंने अलीगढ़ के

नवाब और मुगल बादशाह से युद्ध किया। दोनों पक्ष सूरजमल की सहायता पा लेने को उत्सुक थे। सन् 1750 में दिल्ली के बादशाह के मीर बख्शी सलावत खाँ ने सूरजमल पर आक्रमण कर दिया। नारनौल के पास रात के अन्धेरे में सलावत खाँ की छावनी पर सिंह झपट्टा मारकर सूरजमल ने उसे आत्मसमर्पण के लिए मजबूर कर दिया। सन्धि में जो शर्तें तय हुई वे युवराज सूरजमल की राष्ट्रभावना का परिचायक है। इनमें दो शर्तें इस प्रकार हैं–

1. मुगल सेना पीपल के वृक्ष नहीं काटेगी तथा
2. मन्दिरों का अपमान नहीं किया जायेगा, न ही किसी देवालय को क्षति पहुँचाई जायेगी।

राज बदनसिंह के निधन के बाद 9 जून, 1756 ई. को सूरजमल विधिवत् भरतपुर राज्य के राजा बने। इसके 6 माह बाद ही अहमदशाह अब्दाली भारत में घुस आया। दिल्ली के बादशाह ने बिना लड़े ही आत्मसमर्पण कर दिया। दिल्ली फतह कर अब्दाली ने सूरजमल को दबाने का विचार किया। महाराजा सूरजमल ने अब्दाली को समझौता वार्ताओं में उलझाने की रणनीति अपनाई। इसी समय भरतपुर नरेश ने वह ऐतिहासिक पत्र लिखा जिसमें उन्होंने अब्दाली का मनोबल तोडने की कोशिश की तथा उसे चुनौती भी दी। पत्र पढने के बाद उसे डीग, कुम्हेर और भरतपुर के सुदृढ़ किलों की ओर बढने की हिम्मत ही नहीं हुई। इस प्रकार तुर्कों को उन्हीं के हथियार से मात देने वाला छत्रपति शिवाजी महाराज सरीखा एक और वीर पुरुष भारत की धरती पर अवतरित हुआ था। दिल्ली से मुगलों को पूरी तरह हटा देने का जिम्मा जब महाराजा सूरजमल पर आया तो पहले उन्होंने आगरा से मुगल सत्ता समाप्त कर किले पर अधिकार कर लिया। कुछ ही समय में उन्होंने दक्षिण में चम्बल तक के क्षेत्र पर विजय-पताका फहराई। पूर्व दिशा में हरियाणा का पूरा क्षेत्र भी उनके अधिकार में आ चुका था। अलीगढ़, हापुड़ तथा गढ़ मुक्तेश्वर तक अपने प्रभाव का विस्तार कर लिया था। आगरा में मुगल आक्रमणकारियों के सभी निशान हटाते हुए महाराजा ने पूरे दुर्ग को दूध व यमुना जल से धुलवाया। उसके बाद शास्त्रोक्त विधि से हवन कर आगरा नगरी को यवनों के दुष्प्रभाव से मुक्त किया।

पेशवा के असामयिक निधन के बाद अब स्वयं महाराजा सूरजमल ने दिल्ली को मुगलों से पूरी तरह मुक्त करने का निश्चय किया। उन्होंने तीन तरफ से दिल्ली को घेर कर गोलाबारी शुरू कर दी। रुहेले भरतपुर के वीरों की मार से लगातार पीछे हटते जा रहे थे। ऐसे समय महाराजा हिण्डन नदी के एक नाले को पार करने आगे बढ़े तभी वहाँ छिपे बैठे रुहेले बन्दूकचियों ने जबरदस्त गोलाबारी शुरू कर दी। अचानक हुए हमले से सैनिक सम्भलते तब तक महाराजा सूरजमल के प्राणघातक चोट लग चुकी थी। रविवार 25 दिसम्बर, 1763 ई. के दिन सायंकाल लगभग 5 बजे महाराजा सूरजमल का निधन हो गया।

****

शब्दार्थ -

पराक्रमी	– वीर	वीर-प्रसूता	– वीरों को जन्म देने वाली
जातरू	– यात्री	नरपुंगव	– नरश्रेष्ठ
सर्वदा	– हमेशा	निष्णात	– पारंगत

अभ्यास प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न -

1. 'सम्पसभा' की स्थापना किसने की?

   (क) महाराजा सूरजमल ने　　(ख) संत जम्भेश्वर ने

   (ग) पूज्य गोविन्द गुरु ने　　(घ) बाबा रामदेव ने　　(　　)

2. बाबा रामदेव की समाधि पर मेला लगता है–

   (क) भादवा सुदी दशमी　　(ख) भादवा बुदी पंचमी

   (ग) भादवा बुदी दशमी　　(घ) भादवा सुदी पंचमी　　(　　)

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न -

1. देवनारायण को किसका अवतार माना जाता है?
2. 'सर सांटे रूँख रहे तो भी सस्ता जाण' - पंक्ति का अर्थ बताइए।
3. सूरजमल कहाँ के राजा थे?
4. संत जम्भेश्वर को दिव्य ज्ञान कहाँ प्राप्त हुआ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न -

1. 'जम्मा-जागरण' आन्दोलन के उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए।
2. जलियाँवाला बाग हत्याकांड की तुलना राजस्थान की किस घटना से की जाती है? संक्षेप में घटना का वर्णन कीजिए।
3. सूरजमल की राष्ट्रीय भावना से संबंधित किन्हीं दो घटनाओं का उल्लेख कीजिए।
4. 'खेजड़ली' गाँव की इमरता देवी का बलिदान किस कारण हुआ? लिखिए।

निबंधात्मक प्रश्न -

1. मानगढ़ का विशाल पहाड़ किस दिव्य-बलिदान का साक्षी है? विस्तार से लिखिए।
2. समाज में धर्म स्थापना व प्रकृति के सहजीवन के उद्देश्य से संत जंभेश्वर के योगदान का वर्णन कीजिए।

****